ॐ

श्री निरञ्जन ग्रंथमाला – पुष्प २७

माध्वी

"श्री" सोमानन्द

सर्वाधिकार लेखकाधीन

प्रकाशक
इन्दिरा प्रकाशन
द्वारा श्री शिव कुमार ठाकुर
७/बैंक म्युजियम रोड
मंदिरी, पटना-८००००१

प्रथम संस्करण :
श्रावणी पूर्णिमा
संवत् २०४०

प्राप्ति स्थान :
१. वैदेही पुस्तक भंडार
अमर आश्रम
पटना-८००००४
२. महेशमिश्र
आजम नगर
दरभंगा

मूल्य : ६ रुपये

मुद्रक :
मुरलीधर प्रेस
पटना-८००००६

क्रम

१.	श्री गुरु पादुका स्मृति	....	१
२.	उल्लास	....	२
३.	उद्गार	....	४
४.	मंगल पञ्चकम्	....	९
५.	त्रिपुरा महिम्न	....	११
६.	सौन्दर्य लहरी—दो शब्दों की कुंजी	....	४७
७.	सौन्दर्य लहरी	....	५१
८.	मोहि ब्रज बिसरत नाही	....	६२

श्री गुरु पादुका-स्मृति

१९३८ प्रथम दर्शन

राज दरभंगा के हरित उद्यान में
लाल पीत नीले पुष्प सब सजे हैं
बुद्धिजीवी पंडित ज्ञानी सब नगर के
प्रातः समीर के स्वागत में घूमते हैं
योगी निरंजन निज भक्तों से घिरे हैं
टहल रहे, मन्द मुस्कान से देखते हैं
ग्यारह वर्ष की आयु मेरी, दौड़कर जाता हूँ
'बाबा, प्रणाम'—सुन विहँस पड़ते हैं
यही था प्रथम दर्शन चिरंतन गुरुदेव का
यही थी प्रथम कृपा वृष्टि शिवशंकर की
यहीं से ज्योति की धारा थी निकली
यहीं ज्ञान गंगा का गोमुखी बना था
धन्य वह क्षेत्र जहाँ श्यामा विराजती हैं
शिव माधवेश्वर, कङ्काली हैं साक्षिणी
और माँ तारा जैसे दूध पिला रही हो
बाबा ने कहा था—एजो तेरा भला हो

"श्री" सोमानन्द

ॐ

ॐ गणपतये नमः

ॐ सदगुरवे नमः

उल्लास

उर्ध्व गामिनी गंगा धारा
साधार अष्टमी चन्द्र कला
सहज समया श्री अर्चना
सद्गुरु का आशीर्वाद मिला

त्रिपुरा महिम्न औ' सौन्दर्य लहरी
सरस अनुवाद सरल भाषा में
उनकी महिमा गरिमा संचित
प्रतिबिम्ब यथा है दर्पण में

वृन्दावन की याद यथावत्
प्रस्फुटित हुयी है कविता में
"वृन्दारण्ये स्वपद रमणे"
चरितार्थ हुयी है भाषा में

सौन्दर्य लहरी, दो शब्दों की कुंजी,
कुंजी परम् परा की चिन्मय
प्रभु करुणामय कृपा के सागर
रमें सुधी पायें निज परिचय

स्वनाम धन्य दुर्वासा ऋषिवर
हैं वे स्वयं सदा शिव रूप
शंकर के अवतार हैं शंकर
दुस्तर उद्धारक ज्ञान स्वरूप

कृष्ण नाम की महिमा अक्षय
गोपीश्वर हैं जगद्गुरु
दिव्य कृपा है श्री नाथ की
'माद्वी' गोपाल सुन्दरी रूप

सोममयी है शुभ्र ज्योत्सना
कल-कल कल-कल मधु का झरना
भक्तिपूर्ण वैराग्य विमल है
ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय का मिलना

सत्यम् - शिवम् - सुन्दरम् में
स्वस्वरूप का सतत निरीक्षण
नित्य निरंतर रमण स्वयं में
गुर्णे प्राज्ञ, यह अकथ कथन

× × ×

सोमामृत मधु पान परम सुख
सोम रस स्नान करो
सोम के द्रव में डूब-डूब कर
आनन्द से अभिषेक करो

जय गुरुदेव
जय श्री नाथ

—रत्नेश्वर

ॐ

ॐ सद्गुरवे नमः

ॐ [redacted] गणपतये नमः

उद्गार

पुष्पाञ्जली

ॐ सद्गुरु चरणों का वन्दन
श्री पादुका पूजन - तर्पण
सभी वाग्देवियों को नमन
वशिन्यादि हों प्रसन्न, हों प्रसन्न
प्रभु की है कृपा अपार
उसी कृपा का है आधार
वाग्देवियों से वेष्टित श्री
करें दिव्य करुणा संचार

मंगलाचरण

प्रथम पूजता गणपति पद को
भारती कृपा प्रभु महिमा गान
सकल साधना सिद्धि वरदा के
अमृत वापी में स्नान
त्रिशक्तिमय नित्य भाव से
सर्वत्र हैं श्री विद्यमान
सब में व्याप्त यथावत् गुरुवर
पूजूँ विश्व-रूप भगवान्

वन्दना

प्राप्त तुम्हारी करुणा से प्रभु
परा भक्ति, मुक्ति, सद्ज्ञान
प्रज्ञा मधुमती ज्योतिर्मय में
युक्ति सहज पथ धारण ध्यान

व्याप्त तुम्हीं से सकल चराचर
षट् चक्रों में तुम गतिमान
द्वादश दल पर चरण - पादुका
सहस्र दलों का क्षत्र महान

सतत पादुका पूजन हूँ रत
सोमानन्द नाथ पद ध्यान
जय गुरुवर करुणानिधान
हे देव सनातन तुम्हें प्रणाम

तुम स्वयं हयग्रीव विष्णु हो
हो तुम्हीं हमारे दत्तनाथ
तुम्हीं हो माता, पिता तुम्हीं हो
सखा, मित्र औ' बन्धु सुजान

राम तुम्हीं औ' कृष्ण तुम्हीं हो
सदाशिव रूप वृष्टि कल्याण
परम सौभाग्य, यथा सुलभ है
दक्षिणामूर्त्ति मौन व्याख्यान

ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर तुम हो
निर्गुण - सगुण परात्पर ज्ञान
तुम्हीं प्रणव औ' परब्रह्म हो
महाशक्ति के अधिष्ठान

तुम्हीं कुलाकुल यथा परमशिव
त्रिगुण सहित निर्गुण विज्ञान
तुम में ही स्थित श्री सुन्दरी
बाला ललिता मधुमती ज्ञान

सतत पादुका पूजन हूँ रत
सोमानन्द नाथ पद ध्यान
जय गुरुवर करुणानिधान
हे देव सनातन तुम्हें प्रणाम

तुम्हीं सोम अमृत बरसाते
आनन्द प्रवाह का संचारण
स्फुरणा बन छा जाते प्रभु
अमृतीकरण का सम्पादन

कृपा बखाने कौन कृपामय
जो अनादि जिसका न अन्त
बन जाऊँ मैं शेष शारदा
महिमा गायन में हूँ अक्षम

सतत पादुका पूजन हूँ रत
सोमानन्द नाथ पद ध्यान
जय गुरुवर करुणानिधान
हे देव सनातन तुम्हें प्रणाम

मिलता महाविराट बिन्दु में
गुरु से लघु का यह सम्बन्ध
शाश्वत करुणा का ही फल है
दीन-हीन कहलाते धन्य

विख्यात स्वभाव है, दया नाथ की
मिटे तृषा, हैं शिष्य सनाथ
महापादुका पूजन सक्षम
सकल साधना सिद्धि निष्काम

सतत पादुका पूजन हूँ रत
सोमानन्द नाथ पद ध्यान
जय गुरुवर करुणानिधान
हेदेव सनातन तुम्हें प्रणाम

जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति तुम हो
चिन्मयी तुरीया भासमान्
तुम्हीं से शिक्षा और तितिक्षा
रवि शशि अनल सभी द्युतिमान्

तुम्हीं हो कर्त्ता, भक्ति तुम्हीं में
तुम्हीं हमारे सरवस ज्ञान
तुम्हीं में मन हो, बुद्धि तुम्हीं में
पूर्णकाम हों आत्माराम

सतत पादुका पूजन हूँ रत
सोमानन्द नाथ पद ध्यान
जय गुरुवर करुणानिधान
हे देव सनातन तुम्हे प्रणाम

—रत्नेश्वर

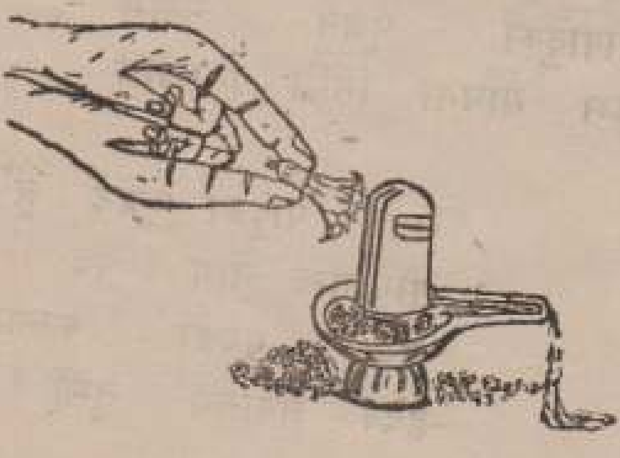

मंगल पंचकम्

शक्ति सहित शिव पाद-पद्म का मंगल गान मैं गाऊँ।
सगुण अगुण की बात पुरानी, गाये को मैं गाऊँ ।।

नाम ग्राम हनुमान नगर से उठी ज्योति की दिप्ति शिखा।
जिन्हें देख मिट जाती पल में मन-मदान्ध की हीन तृषा ।।
नमन उन्हें जिन मुखने पहले, उन्हें कहा था सूर्यकान्त।
नमन करूँ मैं उस जननी का, जन्म दिया ठाकुर वृतान्त ।।

तिमिर निगम, आगम प्रकाश का गान आज मैं गाऊँ।
सगुण अगुण की बात पुरानी, गाये को मैं गाऊँ ।।

जय हो जय जनपद ललाम, बाबा जहाँ बटेश्वर धाम।
चण्डेश्वर चामुण्ड विराजे, निज-सुत-हित-रत अष्टयाम ।।
यंत्र-तंत्र औ' मंत्र काल की गरिमा गायें सन्त सुजान।
परम् परा को मन में रखकर, स्तुति गायें प्राण समान ।।
सकल धरोहर भू-भूमा का मंगल गान मैं गाऊँ।
सगुण अगुण की बात पुरानी गाये को मैं गाऊँ ।।

जय त्रिपुरे, त्रिपुरारी की जय मनहर रास बिहारी की जय।
नाथ त्रिविक्रम देव निरंजन, दत्तनाथ, भार्गव की जय-जय ।।
सोमानन्द सदाशिव को भी पहनाये जो अक्षर माला।
सकल तत्व के समदर्शी शिव, रश्मि अनन्त अलौकिक अमला

सदा त्रिदेव दाहिने जिनके, चरण शरण मैं जाऊँ।
सगुण अगुण की बात पुरानी, गाये को मैं गाऊँ ।।

करुणाकर कमलाक्ष की जय-जय,
निज गुरु पंकज पाद की जय-जय।
बोलो त्रिगुणागार की जय-जय,
जय ललिता माता की जय-जय॥
सकल साज-आवाज़ की जय-जय,
नित्यानन्द प्रकाश की जय-जय।
व्योम बिहारी श्री बाबा की,
रोम-रोम कह जय-जय, जय-जय॥
मिला मुझे है स्नेह, स्नेह से,
जगमग-जगमग दीप जलाऊँ।
सगुण अगुण की बात पुरानी,
गाये को मैं गाऊँ॥
ब्रह्मा, विष्णु, महेश, गजानन,
बाबा श्री ओंकार पुरातन।
जय अनन्त जय अज्ञ-अक्ष,
अज्ञान - तिमिर नित करें भक्ष॥
कन्द-मूल उत्तुंग षड्ज का,
चक्र सुदर्शन अमृत नागर।
सन्तों के गागर में सागर,
फण सहस्र पर सदा उजागर
अभिनव गुप्त सन्त हृदयाम्बुज,
बाह्याभ्यन्तर समरस पाऊँ
सगुण अगुण की बात पुरानी,
गाये को मैं गाऊँ

—मदन मिश्र

महामुनि दुर्वासा रचित

त्रिपुरा-महिम्न

का

अनुवाद

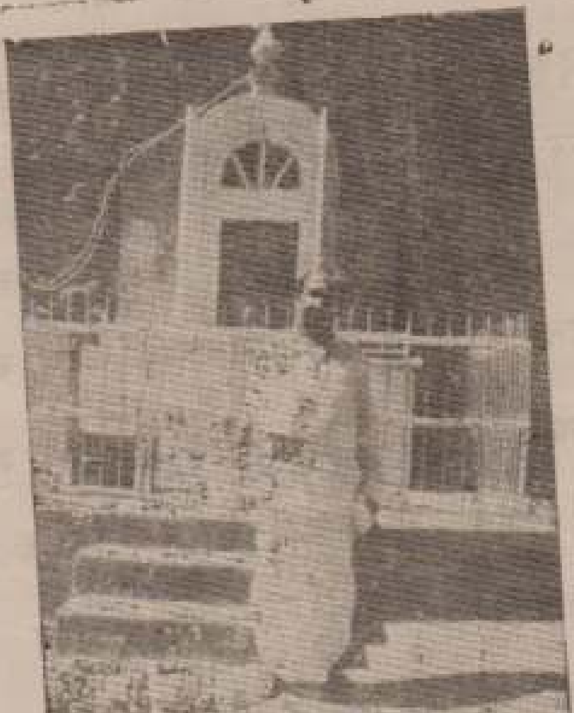

श्री शंकर पर्वत

श्रीनगर

त्रिपुरा-महिम्न

ॐ गुरु रूपी गणपति को प्रणाम बारम्बार है
दिखा रहे जो सच्चिदानन्द स्वरूप को
देव और पशुयोनियों का, सतत ब्रह्म दर्शन का
मधुर फल देते हैं रंक और भूप को
तुङ्गकुचा श्री माँ ललिता की करता हूँ वन्दना
काल की गोद में बैठी कामेश्वरी शिव कान्ता हैं
माँ श्री हैं कस्तूरी तिलकाङ्किता सदा
वन्दना करता हूँ साष्टांग उनके चरण कमलों में
प्रकाश प्रतिभा ज्ञानानन्दनाथ त्रय सुन्दर हैं
साथ जिनके हैं सदा माता त्रिपुर सुन्दरी
उन्हीं का ध्यान कर मुनि दुर्वासा रचित
त्रिपुरा महिम्न स्त्रोत्र लिख रहा हूँ भाषा में
नित्यानन्दोदय टीका सदानन्द प्रदायिनी है
उन्हीं के अनुसरण पर डेग को बढ़ाता हूँ
यह नागरी भाषा की व्याख्या सरल है
श्री गुरुनाथ को प्रणाम बारम्बार है

१

तीनों लोकों की सुन्दरता के महासिन्धु के मन्थन से
मूर्त्ति तुम्हारी प्रकटी है, है सहस्त्र सूर्य की आभा
जपा पुष्प सम लाली सुन्दर, विश्व जनन का केन्द्र है
चार वाणियाँ वाली मूर्त्ति, स्फुरित हो सदा मेरे मन में

२

भजन करता हूँ तुम्हारी चिन्मयी कुण्डलिनी मूर्त्ति का
अकथ त्रिकोण के आसन पर जो सदा विराजती हैं
षट् चक्रों के सभी देवों से सुशोभित स्वर-व्यञ्जन के
अनमोल मोती हैं पिरोये सहस्त्र दल कणिकाओं में

३

प्रणाम है उस वाग्भव बीज का जो ऐन्दवात्मक है
अमृत सरिस झर रहे हैं अक्षरों के विन्दु जहाँ से
छन्द स्वर लय ताल महाध्वनि प्रसारित है
मातृकाओं से बने पद वाक्यों की जननी सदा हैं आप

४

तुम्हारे वाग्वीज से जगत का व्यवहार है चल रहा
त्रिलोकी के मन्त्र तन्त्र की महिमा का केन्द्र है
जिसके जप से शब्द ब्रह्म को प्राप्त है सर्वज्ञता
ब्रह्मादि देव भी स्पर्धित हैं ऐया की गरिमा से

५

अष्ट मातृकाओं की व्यापिका जो मात्रायें हैं
जला देती हैं अविद्या औ' जन्म कर्म के जाल को
यह प्रवोधाग्नि है जो जागी कुण्डलिनी का प्रतीक है
सारे विकल्प भस्मीभूत बनते जाते हैं

६

कलापूर्ण जो मध्यम बीज हैं, ज्ञान इच्छाक्रियामय हैं
अनन्त शक्तियों के कण छिटकते उनकी आभा से
स्वात्म प्रसार में सृजन पालन का वेग चल जाता है
उन्हीं का आधार ले त्रिदेव खटते रहते हैं

७

हे कामेश्वरि, काम क्रोध मद लोभ मोह
सभ शत्रु हैं ज्ञानी के, सभी दूषण भूषण बन जाते हैं
जो कलामयि के बीज का जप करता है सदा
साष्टांग प्रणाम करता हूँ उस परा स्वरूप को

८

भक्तों की जड़ता नष्ट कर, सभी कामनायें करती हैं पूर्ण
वेदों ने भी आत्मात्रय बीज का गुण गाया है
सर्वराजवश करने में निपुण हैं, हे श्री विद्ये
काम कला बीज ही ओंकार गिना जाता है
सदा भजन करता हूँ तुम्हारी उस गरिमा का

९

अनल ज्वालाओं सदृश सौकारमय बीज है
यही है तुरीया, परब्रह्म की चिरसंगिनी
विसर्ग भूषित औकारमय जो संविद्रूप है
उस ॐकार रूप ज्ञानात्मक परा बीज को प्रणाम है

१०

जिस पराबीज ने सृष्टि से ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय तक
दिव्य जीवन का कर्मानुष्ठान दिखलाया है
वागर्थंव्यवहारकारणमय शरीर वाली हैं आप
हे माँ शिवे, आपके परम बीज को नमस्कार है

११

जो त्रिवेद हृदय में स्थित पंचतत्त्व औ' सूर्य-चन्द्र में
जड़ चेतन की मूल चेतना, जीवन का भी जीवन है
जिस पराबीज के स्मरण से जगता जड़ चैतन्य है
उस शक्ति को प्रणाम है जो महाचैतन्य रूपा है

१२

जो त्रिदेव, इन्द्र को देवे सब ऐश्वर्यं सदा
बनी सदा जो लहरी कविता चौदह विद्यारानी की
तीन गुणों से पार शान्ति बन सदा करे जो सत्य प्रगट
उसी देवी श्री विद्या का करूँ सदा मैं नित्य नमन

१३

मातृकाओं के योग से माँ, न्यास यज्ञ के द्वारा
जड़ता तम को दूर कर श्रीविद्या प्रकाश है प्रगट होता
करते हैं त्रिदेव वन्दन सदा उस त्रिबीज का
निष्ठा से वे महाकमल के आसनवाले बन जाते हैं

१४

वाक् शक्ति और कामकूट की महिमा चमत्कारिणी है
जो साधक हैं ज्ञानी इनके, उनकी महिमा क्या गाऊँ
अपने गुरु से दीक्षित विधि से जो करते हैं नित्यार्चन
सृजन, पालन और लय करने के अधिकारी बन जाते हैं

१५

जो जपता है नित्य तुम्हारी सौभाग्य विद्या श्री को
सायं अग्नि प्रभा में श्री चक्र का पूजन कर
उसको सभी सिद्धियाँ देती हो माँ कल्याणी
काम कला शिवमय, माता का करता रहता हूँ वंदन

१६

जब तक माँ के चरणों का वन्दन कोई नहीं करता
कैसे शास्त्र ज्ञान व्याकरणमय कवि कोई बन जायगा
भले करे वह पाठ महाकाव्यों का अपने मन से
माँ की कृपा अपेक्षित है सब यज्ञों में पहले

गृह बन जाता स्वर्ग है
मित्र बन जाते हैं सभी
मृत्यु भाग जाती है, अभय
हे माँ गौरी, जो

अकथ त्रिकोण में, सूर्य-चन्द्र-
तीन लोक, तीन काल,
त्रितय वस्तु तत्वमयी त्रि
आपको भजने वाले पंडित भी

मूल, अनाहत और आज्ञा
जिनकी समानता है चारों
महाविभूति जो तुम्हारी
यही है तुम्हारी सर्वो

'आपोज्योतीरसोऽमृतम्'
आगम और निगम जिस
सबको सुफल करता
रूप है तुम्हारा गुरु, बुद्ध,

१७

गृह बन जाता स्वर्ग है, रमा स्वयं देती हैं मुक्ति
मित्र बन जाते हैं सभी, राजा भी वश में रहते
मृत्यु भाग जाती है, अभय रह, गुणी व्यक्ति कहलाता है
हे माँ गौरी, जो भजते हैं तुम्हें प्रेम से

१८

अकथ त्रिकोण में, सूर्य-चन्द्र-अग्नि विन्दु में, तीन चरणमध्य में
तीन लोक, तीन काल, तीन वेद और त्रिअवस्थाओं में
त्रितय वस्तु तत्वमयी त्रिपुरे सदा त्रिधा व्यवस्थिता हैं
आपको भजने वाले पंडित भी धन्य हैं, हे माँ काम कला

१९

मूल, अनाहत और आज्ञा में स्थित हैं तीन कूट सभी
जिनकी समानता है चारों वेदों से, ओंकार में
महाविभूति जो तुम्हारी है, जगती है साधकों में
यही है तुम्हारी सर्वोत्कृष्टता, सदा सुगमता

२०

'आपोज्योतीरसोऽमृतम्' गायत्री सशिरा है
आगम और निगम जिस तुरीया का गुण गाते हैं
सबको सुफल करता है तुम्हारा जप
रूप है तुम्हारा गुरु, बुद्ध, शिव, सविता, हरि का

२१

पांच कोश की प्राणशक्ति बनकर, हे कृपामयी
दीक्षित साधकों को ब्रह्मविद् बना देती हो
घोष डिंडिम इसका करते उपनिषद् शास्त्र
प्रबोध परमानन्दरस विभोर कर देती हो

२२

सद्गुरु से दीक्षित जो निष्ठावान साधक हैं उनमें
'सच्चित्त्वमसि' अध्यात्म विद्या भर देती हो
अपने पूजकों को मुक्त कर भव से, अतुल
प्रभाव भर, तत्त्वज्ञ बना देती हो

२३

नभ का प्रकाशमय सूर्य दूर कर सकता तम को, नक्षत्र नहीं
वैसे ही अविद्या अन्धकार मिटाती हो अपने प्रकाश से
हे शिव की महारानी शांभवी, मात्र तुम ही देती हो ज्योति
जीवनमुक्त साधकों में शक्ति भर कृपा कर

२४

तद्रूपता को प्राप्त, गुरुदेव की उपासना कर भजते जो वी
तुम्हारे आयुधों की जय हो जो महाविलास सागर की लह
वैसे जो जन्ममरण, सुख दुःख में डूबते अभागे ज
अपना साधन सिखा उन्हें मुक्त कर देती

२५

मुझ भयभीत की रक्षा करो माँ, जो डूब चुका
लख चौरासी में, कई बार के गर्भ वास में
कितनी मातायें और पिता, कितने छूट चुके पीछे
रक्षा करो, रक्षा करो, हे माँ त्रिपुर सुन्दरी

२६

जप-तप, अनेक यज्ञ, कष्ट प्रद जो साधन है
भरे विकल्प संकल्प से कर्त्ता फल पाता है
सबसे है उत्तम तुम्हारा निर्मल पद
दूर करता है सभी कण्टकों को मार्ग से

२७

सुन्दरी के परा शरीर से निकले ५१ वर्ण
सार्थक अक्षरों से शोभित पद समूह मान छन्द
व्याप्त त्रिलोकी में, चिदात्मना चैतन्य में
केवल मैं ही 'हूं'—तुम्हारा यह संदेश हैं सुनाते

२८

श्री चक्र में भरा है काल चक्र, देश चक्र
उनके अधिष्ठताक्षर ज्योतिमय हैं सर्वदा
अलग रंगवाली इन यन्त्रों के मध्य में
बिन्दुमय सिंहासन पर तुम ब्रह्मविद्या विराजती हो

२९

त्रिविन्दु के खेलों में षट् कूट का विपर्यय है प्रकट
तीन प्रणव आपस में मेलकर त्रितारी हैं
इन सबों के सम्पुटित जप करते रहने से
गुह्यों में गुह्य योग जनित भोग मोक्ष देती हो

३०

इस दुर्वासा उपासक के हृदय में वास करो हे माँ
हजारों बाल सूर्य की कांतिवाली शोभा है तुम्हारी
अगणित आभूषणों से सदा हो सुसज्जिता
त्रिपुर संहारक प्रभु शिव को रिझा लेती हो

३१

नूपुर कटक तुम्हारे चरणों में शोभा पाते हैं
महामुद्रा औ' अलक्तक से पाद पङ्कज विभूषित हैं
चन्द्र सम नख है द्युतिमान, त्रिदेव पाते हैं सदा फल
आपके पाद पद्मों को मैं अपने सिर पर स्मरण करता

३२

रेशमी वस्त्र आपके अत्यन्त रक्तवर्ण वाले हैं
मणिमय रत्नों से सदा जगमगाते रहते हैं
प्रदीप्त हेम घंटिका से जगता है नितम्ब बिम्ब
कोमल श्वासों से रक्तवस्त्र हिलने लगते हैं

३३

कस्तूरी कपूर अगुरु कुंकुम मिले चंदन
वैदूर्य आदि मणियों के कण्ठहार शोभते हैं
ब्रह्मा विष्णु रुद्र ने जिन कुचों का अमृत पीया है
दोनों सुवर्ण कलशों की भाँति हृदय में ध्यान करता हूँ

३४

मैं तुम्हारा सेवक, दुर्वासा मुनि, ध्यान करता हूँ
केयूरांगद कटक कङ्कण का जो हीरे मोती से बने हैं
अँगूठियाँ हीरा मणियों की, कण्ठाभूषण जो चमकते हैं
शंख तुल्य तुम्हारे कण्ठ का सदा ध्यान आता है

३५

पूर्ण चन्द्र सम मुख का स्मरण करता मैं, दुर्वासा मुनि
फुल्ल कमल सा जो मुख सदा खिला रहता है
आनन्दमय मंदहास से मण्डित है वह, और
कुन्दाकार सुदन्तपंक्ति सदा शशिभा पूर्ण है

३६

[illegible] स्वर्ण से सुन्दर कर्ण ताटङ्क चमक रहे हैं
[illegible] जड़े नासिका रत्न की विचित्र आभा है
[illegible] सबों का ध्यान करता मैं, दुर्वासा मुनि
[illegible] में ये सब जैसे विराजते रहते हैं

३७

हे महापद्मवन वासिनि, त्रिपुरे, ध्यान है उस वेणी का
जिसमें केवड़ा, कदम्ब, अशोक, शिरिष, कालागुरु
से सुगंधित तत्व हैं मिश्रित, उन्मत्त कज्जल सम हैं
भ्रमर पंक्ति सी यह वेणी झूम रही है

३८

स्वर्ण मुकुट अलंकृत सिर प्रदेश का ध्यान करे, दुर्वासा मुनि
गजमुक्ता और स्वर्ण किंकिणिया से जो चमक रहा है
अनेक विचित्र पुष्प मालायें लटक रही हैं नीचे
वही मुकुट मेरे मानस को सदा प्रकाश दे, हे माँ !

३९

माँ, तुम्हारे चन्दन चर्चित त्रिपुण्ड तिलक का ध्यान करता हूँ
अङ्गराग सुरभित इन्द्र के नन्दनवन का चन्दन मस्तक पर है
धूपित धूप से वासित, ताम्बूल चर्वण से अधर लाल है
तीनों लोकों के सुगन्धित पुष्पों से अलंकृता,
मैं दुर्वासा पूजन करता हूँ

४०

प्रबुद्ध होकर जो तुम्हारे परा रूप का ध्यान निर्मल म[illegible]
से करते [illegible]
वृद्ध भी युवा जैसे लगते हैं, रमाओं को रिझाते [illegible]
तुम्हारे चरण की सेवा ही है ऐसी कि राजमुकुट [illegible]
उतरता [illegible]
साधकों के चरणों तक, अष्ट सिद्धियाँ सदा सेवती हैं [illegible]

४१

त्रिभुवन वधुओं को तुम्हारी उपासना खिला देती है
पुण्ड्रेक्षु धनुष उनके लिए चन्द्रमण्डल बन जाता है
स्मरण मात्र से त्रिभुवन वधू में मदनपूर्ण चन्द्र सा लगता है
रात दिन तुम्हारा साधक नाम रूप का गुण गाता है

४२

पञ्चपुष्पवाण का ध्यान अमल चित्त से जो करते हैं
अन्तर्दृष्टि उनकी सदा के लिए खुल जाती है
कमल कैरव कल्हार, नील कमल औ' आम्र मञ्जरी
तीनों लोकों की रमणियों में अनङ्ग भाव भरती है

४३

वशीकरण और आकर्षण में जो तुम्हारे पाश को पाते हैं
उन्हें देती हो सर्वज्ञता और भरती हो वशीकरण
ऐसे तुम्हारे पाश से ज्ञान पूर्ण होता है
उस पाश को हे माँ, सदा नमन करता हूँ

४४

स्वर्ग मर्त्य पाताल के प्राणियों के स्तम्भण में
जो पराक्रमी साधक तुम्हारे अंकुश का ध्यान करते हैं
राजा, शत्रु सेना तथा देवियाँ त्र्यैलोक्यों की
वश हो जाती माँ, तुम्हारे अंकुश के प्रभाव से

४५

मोह के प्रसार को रोक देता है तुम्हारे धनुष का ध्यान
पञ्चपुष्प वाण के ध्यान से लक्ष्य पा लेता है
पाश का ध्यान मृत्युकाल को करता वशीभूत है
दुर्ग स्तम्भन भी अंकुश के मनन से कर लेता है

४६

पचास मातृकाओं सहित गणेश भगण योगिनी राशि पीठ
का जो न्यास करते हैं, वाग्देवियों को साक्षिणी रख
छत्तीस तत्वों सहित जो आत्म विद्या संग सर्व तत्व न्यास हैं करते
उन साधकों में, तुमसे कोई भेद नहीं रह पाता

४७

विविध बहुकला के ज्ञाता, श्रेष्ठ साधकों में
जिनमें सदा इष्ट देवी बन बसती हो
विलासवती लक्ष्मी रहती सदा है उनके संग
उसका भवन सदा स्वर्ग बना रहता है

४८

बुद्धि और वाणी, मेरे पास कहने को है नहीं कुछ
स्तुति करने में जहाँ त्रिदेव मन्द पड़ते हैं
मैं तो स्वभावतः हूँ मन्द बुद्धि माँ, अतः
क्षमा याचना करता हूँ, करता हूँ क्षमा याचना

४९

करुणानिधे, कृपा करो, हरण करो दरिद्रता
दे दो माँ सर्वज्ञता, तुम्हारा चरण पकड़े हूँ
ये चरण मरण विनाशक हैं उन्हीं की शरण में हूँ
सदा इनका ध्यान करूँ यही भाव बरसा देना

५०

पाप के प्रचण्ड दावानल को भस्म कर देना माँ
इन स्तुतियों का प्रतिदिन पाठ करते रहने से
सभी ऋद्धि-सिद्धियाँ, विद्यायें भी जितनी हैं
सभी सम्पत्तियाँ एकत्र हो यहीं पर

५१

हे मंगल स्वरूपिणी, संगीत विद्या रसीली हो
विचित्रता परिपूर्ण हो मेरी कवित्व शक्ति
बनूँ विख्याता सदा तत्व का, ध्यान रहे चरणों का
लक्ष्मी निवास करे शोभा प्राचुर्य से, बन जाऊँ सुन्दर

५२, ५३

राज मुकुट का गान करने वाले तुम्हारे कई साधक हैं
उनका रिपु समूह सदा शान्त बन जाता है
आगम निगम के दुर्गम अर्थ शब्द को
तुम्हारे साधक प्रकट कर मुक्त बन जाते हैं

५४

आगम निगम उपनिषदों और विद्याओं के
मन्थन से दुर्वासा ने जो सार तत्त्व पाया है
उनको ही लेकर माँ त्रिपुरा की स्तुति में यहाँ
भावपूर्ण, भक्तिपूर्ण ढंग से प्रकटाया है

५५

जय हो सदा महामुनि दुर्वासा गुरुराज की
मानव रूप धर कर निग्रह और अनुग्रह अपनाया है
सत्पुरुषों पर कृपा कर, दुष्ट जनों को दण्ड दे
राज राजेश्वरी का सफल राज मार्ग दर्शाया है

—०—

सौन्दर्य लहरी

दो शब्दों

की

कुंजी

श्री शंकराचार्य शैल

श्रीनगर

सौन्दर्य-लहरी, दो शब्दों की कुंजी

नवावरण देवीनां ललितायां महोजसः
एकत्र गणनारूपो यन्त्रमन्त्रार्थं गोचरः

माँ नवावरणमयी हैं। सदा नया है उनका आवरण, सदा नव ही है। पाँच जोड़ चार। दो तीन चार। एक रूप निराला है, सौन्दर्य वर्णन के परे है। उसी को लिखा शिव ने, पुनः आद्य शंकराचार्य ने। नाम रखा सौन्दर्य लहरी।

पहले पहला अक्षर धरें। अक्षर है, क्षर नहीं। जिसने धर लिया अमर हो गया, अक्षय हो गया।

सौ परा प्रासाद, मातृ-मन्दिर है। स शक्ति है, सबके साथ है। अ ब्रह्माजी हैं, सत् हैं। उ विष्णुजी हैं, चित्त हैं। इसी से सौ सच्चिदानन्द हैं। माँ भी हैं, शिव भी। अनुस्वार, विन्दु, परमात्मा हैं। द दूर्गा हैं, माँ हैं। रेफ अग्नि हैं, गुरु-देव हैं! य में इ और अ है। अ कामेश्वर शिव हैं, इ काम कला माँ हैं। अतः सौन्दर्य हुआ माँ का। लहरी इन्द्रियातीत को कहते हैं।

श्रुति—'परोक्ष प्रिया इवा हि देवाः' (वृहदारण्यक उपनिषद्)

देवगण परोक्षप्रिय होते हैं। लहरी प्रवाह प्राचुर्य, प्रकाश-प्राचुर्य का द्योतक है। ई, इषु, ईशानी, अर्थात् शासन करने वाली है। नादमयी चैतन्य शक्ति (चित् शक्ति) जो आनन्दानुभूति को प्रकाशित करती है, परा शक्ति की

अनुभूति दिखाती है, जो दहराकाश रूपिणी है, वही प्रकट है लहरी में। इसमें ह स्तोभ अक्षर है। सामवेद का प्रतीक है। 'सामवेदो ब्राह्मणानां प्रसूतिः।'

यह सौन्दर्य-लहरी अपने आप में एक महान् चिन्तामणि मन्त्र है। कैसे है, यही विचार का विषय है। कहा है—

'चिर कालोपासिता सती पुरुषार्थान्
अप्रार्थ्यमानापि स्वयं एव ददाति।'

अधिक दिनों तक उपासना (निकट में आसन) करने से बिना माँगे वह पुरुषार्थ देती है। जीवन का लक्ष्य प्रदान करती है। ललिता त्रिशती में २६० वाँ नाम है 'कांक्षितार्थदा'—इच्छा पूरित करती है, कांक्षा पूरी करती है।

निकट में रहे माँ के, चरणकमलों का सौन्दर्य निरखता रहे, चरणों को अपना शिरोमुकुट माने, चरण जल से अपना सिर धोये, चरण विद्या ओर पादुका विद्या का जप करे, माँ और गुरुदेव का तादात्म्य रखे—यही लहर बार-बार उसे आप्लावित करे, तो वह अपना शुभनाम—'कांक्षितार्थदा' चरितार्थ करती है।

सौन्दर्य

का

स

१. स है सीयन्ते अर्थात् आनन्द भोग करना। राजा की भाँति धन, सुवर्ण, वाहन, भूमि आदि का आनन्द उपभोग।

२. स है सर्वात्मा। सब में सब, सब का कारण, स-कार रूपा है माँ। मन्त्र रूप में द्वितीय-कूट के दूसरे वर्ण का आकार हैं—ॐ सकार रूपायै नमः।

३. स सर्वज्ञा है। मुण्डक उपनिषद् में है—यः सर्वज्ञः सर्ववित्। जो सब जानती है और सबका ज्ञान रखती है।

४. स-सर्वेशी है। सब पर शासन करती है—ॐ सर्वेश्यै नमः।

५. स सर्वमंगला है। शुद्ध चैतन्य रूपा वह सदा मंगल प्रदायिनी है। माँ एवं उनके पुण्यमय रूप में अन्तर नहीं है, क्योंकि सभी मंगलों के रूप में वह स्वयं है। राजा और राजा के सुन्दर शरीर में जैसे कोई अन्तर नहीं है, लोग कह देते है—राजा सुन्दर है।

नवधा भक्ति से प्रसन्न होकर माँ सब का मंगल करती हैं—ॐ सर्वमंगलायै नमः।

६. स सर्वकर्त्री हैं। श्वेताश्वरोपनिषद् (३ १) में है—ईशत ईशनीभिः। भगवान माया के द्वारा सब करता है। वह माँ सब कुछ करती है—ॐ सर्वकर्त्र्यै नमः।

७. स सर्वभर्त्री हैं। सारे ब्रह्माण्ड को धारण करती हैं। बृहदारण्यक उपनिषद् (१।४।१) में है—एषा विधृति-रेषां लोकानाम्। ॐ सर्वभर्त्र्यै नमः।

८. स सर्वहन्त्री है। वह सबको विनष्ट करती है। उपरोक्त तीनों नामों से सृष्टि, स्थिति, लय का भान होता है—ॐ सर्वहन्त्र्यै नमः!

९. स सनातना है। उसका रूप सदा सर्वमय ओर पूर्ण है। 'अजो नित्यः शाश्वेतोयं पुराणः'

(कठोपनिषद् २।१८)

ॐ सनातनायै नमः।

१०. स सर्वानवद्या है। वह दोष रहिता है। सच्चिदानन्दमयी है। स्तुति करें, वरदान देगी। ॐ सर्वानवद्यायै नमः।

११. स सर्वाङ्गसुन्दरी हैं। प्रत्येक अंग में सुन्दरी हैं।

ॐ सर्वाङ्गसुन्दर्यै नमः।

१२. स सर्वसाक्षिणी है। जड़ और चेतन सबों की साक्षिणी है। वस्तुतः वह सबको देखती है। ॐ सर्वसाक्षिण्यै नमः।

१३. स सर्वात्मिका है। आत्मा सब में है। 'यच्चाप्नोति यदादत्ते यच्चात्ति विषयानिह— यश्चास्य संततो भावस्तस्मादात्मेति गीयते।' अबाधित निरंतर चैतन्य सत्ता जो सभी तथ्यों को अपनावे, दे, रसान्वित करें—वह आत्मा है।

ॐ सर्वात्मिकायै नमः।

१४. स सर्व सौख्यदात्री है। सब सुख देती है। सौख्य प्रसन्नता का भाव है। प्रिय + मोद + प्रमोद = आनंद। इच्छित वस्तु देखने में प्रिय होता है। इच्छित वस्तु मिलने पर मोद होता है। इच्छित वस्तु के उपभोग द्वारा प्रमोद

होता है। तीनों का योगफल आनन्द है। जीव भोक्ता है, माँ सब सौख्य देती है। सर्व अर्थात ब्रह्मा से कीट तक। माँ जीव को उसके पूर्व कर्म, पूजा, आनन्द, ज्ञान, धन का सुख प्रदान करती है। तैतरीय उपनिषद (२।१) में है— 'ऐष ह्येवानंदयति'। वही एकमात्र आनन्द देनेवाली है।

१५ स सर्वविमोहिनी है। सबको मोह में डाल देती है। भागवत् गीता (५।१५) में है—अज्ञाने नावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः। ज्ञान ढ़क गया अविद्या से, लोग मोहित हो गये। छान्दोग्य उपनिषद् (८।३) में है—अनृते-नाहि प्रत्यूढ़ा। अन्याय द्वारा आत्म-स्वरुप चोरी चला गया। अविद्या यहाँ मोहित करती है—माँ नहीं। ॐ सर्व विमोहिन्यै नमः।

१६ स सर्वाधारा है। सबों का आधार है। तैतरीय उपनिषद में है-ब्रह्मपुच्छे प्रतिष्ठा। दुम की तरह आधार है ब्रह्म। वह बैठी है सबके हृदय में। पूजा में वह सबके हृदय में प्रगट रहती है। ॐ सर्वाधारायै नमः।

१७ स सर्वगता है। सब जगह रहनेवाली है। छान्दोग्य उपनिषद (६-३-२) में है—"अनेन जीवे नात्मानमनुप्रविश्य"। जीवात्मा रूप में वह सब में प्रविष्ट हुई—

ॐ सर्वगतायै नमः

१८ स सर्वाविगुणवर्जिता है। शुद्ध रूप में सत्व है व्यक्ति रूप में, इच्छा रूप में है। वह उपाधियों से ब नहीं। कठोपनिषद् (२-५-११) में है—

"सूर्यो यथा सर्वलोकस्य चक्षुः
न लिप्यते चाक्षुषैः बाह्य दोषैः
एकस्तथा सर्वं भूतांतरात्मा
न लिप्यते लोक दुःखेन बाह्यः ॥"

सूर्य बाहरी दोषों से मुक्त हैं। सब उसके द्वारा देखते हैं। वैसे ही सभी जीवों में आत्मा निर्दोष हैं। दुःख बाह्य अनुभव है संसार का। ॐ सर्वविगुणवर्जितायै नमः।

१९ स सर्वारुणा है। अ सौ य ताम्रोरुणः- श्रुति वचन है। वह लाल है और ताम्रवर्ण का है। ॐ सर्वारुणायै नमः।

२० स सर्वमाता है। जगत् उनके भीतर है। उनका व्यक्त रूप है। उनसे एक हैं। कम्बल में ऊन जैसा भाव है। जगत कम्बल, माँ ऊन है। ॐ सर्वमात्रे नमः।

२१ स सर्वभूषण भूषिता है। सब गहने पहने हैं। माँ ने सभी धारण कर रखे हैं। प्रत्येक देवता के आत्मा में वह है। भक्त जो भी आभूषण अपने ईष्टदेव को अर्पित करता है--सभी गहनों में तो माँ की ही उपस्थिति का भान होता है। सभी भूषण या उपाधियाँ उन्हीं के लिए हैं--वह उपाधि मुक्त हैं। सर्व भूषण का अर्थ है वेदान्त के महावाक्य। माँ ने महावाक्यों के गहने पहन लिए हैं। तत्त्वार्थ या सारांश हैं महावाक्य। वही माँ के भूषणहैं। ॐ सर्वभूषण भूषितायै नमः।

२२ स सकाराख्या है। श्री विद्या के नाम में सकार है। ॐ सकाराख्यै नमः।

किसी बाहरी तथ्य की अपेक्षा न हो, स्वयं प्रकाश हो।
आनन्द = अबाधित सुख। सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म। (तै० उप०
२।१)। "स देव सोम्येदमग्र आसीत" (छा० उ० ६। २।१)।
प्रारम्भ में मात्र सत्य ही था। "प्रज्ञा प्रतिष्ठा प्रज्ञानं ब्रह्म
आनन्दो ब्रह्मे ति व्यजानात्" (तै० उ० ३।५)। जान लें कि
आनन्द ही ब्रह्म है। "आनन्दो ब्रह्मेति विद्वान्न बिभेति
कुतश्चनेति" (तै० उ० ३०।३।५)। जो ब्रह्म को आनन्दमय
जानते हैं, कभी भयभीत नहीं होते।

ॐ सच्चिदानन्दायै नमः।

२९ स साध्या हैं। कार्य का फल हैं। कु..ल साधक
साधन पूजन करे, महावाक्यों का श्रवण करे तो वह
अपरोक्षानुभूति में आ जाती हैं। वह साधना-कार्य के फल
रूप में है।

ॐ साध्यायै नमः।

३०. स सद्गतिदायिनी हैं। सुन्दर लक्ष्य देती हैं।
सत् वह है जहाँ से लौटना नहीं है, जो परम और आनन्द
स्वरूप है। गति—जो हम प्राप्त करें, जो हम जान लें,
गमन की अति जहाँ है। 'ब्रह्मविदाप्नोति परम्' (तै० उ०
२।१)। जो ब्रह्म को जान ले, परम को पा ले। 'ब्रह्मवेद
ब्रह्मैव भवति' जान ले जो ब्रह्म को, हो जाय स्वयं ब्रह्म।
'ये पूर्वं देवा ऋषयश्च तद्विदुस्ते तन्मया अमृता वै बभूवुः'
(श्वेत० उ० ५।६)। अमर हो गये देवता और ऋषि जो प्रभु
से पूर्ण हो गये। मुक्ति स्वयं पर देवता का स्वरूप है।

अविद्या के आवरण को हटाकर वह मुक्ति भर देती है। इस तरह सद्गति देती है। ॐ सद्गतिदायिन्यै नमः।

३१. स सनकादिमुनिध्येया हैं। तत्त्व पानेवाले ध्यानी मुनियों का लक्ष्य है वह। सनक, सनंदन, सनातन, सनत-कुमार जो इच्छा चिन्ता से मुक्त हैं, माँ पर ध्यान लगाते हैं अपनी ही आत्मा के रूप में। अपनी आत्मा के रूप में ही उनपर ध्यान करना श्रुतियों में आया है। 'त्व मे वाहमस्मि भगवो देवते, अहं वै त्वमसि।' तुम ही "मैं" हो। 'क्षेत्रज्ञं च मांविद्धि।' जानें कि क्षेत्रज्ञ मैं हूँ। 'आत्मानं चेद्विजानीया दहमस्मीति पुरुषः' (बृ० उ० ६।४।२)। वे जान लें कि आत्मा 'मैं' हूँ। कठोपनिषद् में है—

मृत्योः स मृत्यु माप्नोति
य इह नानेव पश्यति

मृत्यु को श्रृंखला मिलती है उसे, जो भेद दृष्टि रखता है, एकता खो देता है। ॐ सनकादिमुनि ध्येयायै नमः।

३२. स सदाशिव कुटुम्बिनी हैं। माँ का कुटुम्ब है सदाशिव। गुरुमंडल ही उनका परिवार है।

३३. स सकलाधिष्ठान रूपा है। सभी वस्तुओं का उद्गम स्रोत है माँ। उसका रूप ही सबका आधार है। 'अथात् आदेशो नेति नेति' (बृ० उ० ४।३।६)। ब्रह्म की शिक्षा ऐसे ही दी जाती है। वह यह नहीं है, वह यह नहीं है। 'नेह नानास्ति किञ्चन'—(कठ० उ०)। यहाँ तनिक भी भेद नहीं है। सर्वं खल्विदं ब्रह्म — यह सब ब्रह्म ही है — के द्वारा जाने। ॐ सकलाधिष्ठान रूपायै नमः।

३४. स सत्यरूपा है। त्यत् = वायु + आकाश। सत् = पृथ्वी + अप् + तेज। सच्च त्यच्च भवत्। यह परिणाम-वाद से है। ॐ सत्यरूपायै नमः।

३५. स समाकृतिः। सम = जहाँ पार्थक्य न हो। सच्चिदानन्दरूपा, सदाशिव के समान आकृति, कर्माध्यक्षा बनकर वह स्वयं सदा किशोरावस्था मे ही रहती है। बाल्यावस्था या वृद्धावस्था कभी नहीं देखती है। ॐ। "समःसर्वेषु भूतेषु मद्भक्ति लभते परं" (भा० गी० १८।४)

जिसे सब प्राणियों में समता का भाव रहता है वही मेरी पराभक्ति पाता है — ऐक्यरूपा है वह।

ॐ समाकृतये नमः।

३६. स सर्वप्रपञ्चनिर्मात्री हैं। 'एकं बीजं बहुधा यः करोति' (श्वेत० उ०)। ऐसे ही विश्व प्रपञ्च बना। ॐ सर्वप्रपञ्चनिर्मात्र्यै नमः।

३७. स समानाधिक वर्जिता। माँ की बराबरी का कोई नहीं। उनसे बड़ा भी कोई नहीं। 'न तस्य प्रतिमास्ति (श्वेत० उ० ३०।५।३१) उनकी उपमा या प्रतिमा नहीं है।

३८. स सर्वोतुङ्गा है। सबसे ऊँची है। सबकी कारण-भूता होने से इनका सर्वोच्च स्थान है। 'पादोऽस्य विश्व भूतानि त्रिपादस्यां अमृतं दिवि।' ॐ सर्वोतुंगायै नमः।

३९. स संगहीना हैं। सदा असंग हैं। ॐ संगहीनायै नमः।

४०. स सगुणा हैं। वही त्रिमूर्त्ति हैं। जय भगवान् दत्तात्रेय। ॐ सगुणायै नमः।

४१. स सकलेष्टदा हैं। सबकी इच्छापूर्त्ति करती है। इष्ट=इच्छा की वस्तु है। शास्त्रीय स्रोत की सभी इच्छाओं की वह पूर्त्ति करती है। शास्त्र-सम्मत जो भी इच्छा साधक करते हैं उन सबों की वह पूर्त्ति करती है—धर्म पालन का फल देती है। 'अहं च सर्वत्र ज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च।' सब यज्ञों का भोग मैं पाता हूँ। मैं उनका प्रभु हूँ। जीवानन्द से लेकर ब्रह्मानन्द तक वह देती है—हमारी माँगें शास्त्रीय हों।

सौन्दर्य लहरी के आधार वर्ण 'स' के ध्यान विभिन्न रूपों में व्यक्त किये गये हैं। शेष वर्ण साधकों को अपनी अपनी सक्रियता के फलस्वरूप अपना रूप रंग दिखायेगें। आधार वर्ण 'स' सर्वथा समीचीन है। रेफ, द, य, ल, ह, री—ये सभी मन्त्रात्मक हैं। अतः साधक गुरु कृपा से इन्हें जानें।

द

चार भुजा, पीतवस्त्र, नवयौवन, अनेक रत्न घटित हार नूपुर शोभिता। द में त्रिशक्ति-त्रिबिन्दु है। द को प्रणाम है।

य

इ काम कला हैं। अ कामेश्वर हैं। रेफ रमित आत्मा है। आगे ल की शक्ति देखेंगे।

ल

१. लकार रूपा मंत्र है—ॐ लकार रूपायै नमः।

२. ललिता-ललितं त्रिषु सुन्दरम्। तीनों लिंगों में किसी में व्यवहार हो, वह सुन्दर ही है। ललिता का अर्थ सुन्दर है—तीनों लोकों में सबसे सुन्दरी। ॐ ललितायै नमः।

३. लक्ष्मीवाणीनिसेविता। रमा धन की देवी, वाणी विद्या की। दोनों एकत्र हैं उनमें। सेवा का अर्थ है सदा आज्ञापालन।

ॐ लक्ष्मीवाणीनिसेवितायै नमः। ये दोनों देवियाँ एकत्र हो सदा माँ की आज्ञा का पालन करती हैं।

४. लाकिनी। कं ब्रह्म है। सुख है। आनन्द है। लं लय है।

लं अक म=ब्रह्म, जगत+दुःख से परे है। मणिपुर चक्र में माँ लाकिनी रूप में रहती है। ॐ लाकिन्यै नमः।

५. ललना रूपा=स्त्री रूपा। स्त्री का रूप ही उसका द्योतक है। 'लिंगाकित मिदं पश्य जगदेतत् भगाङ्कितम्।' स्त्री ही उसका रूप या वैभव है। ॐ ललनारूपायै नमः।

भगवत्पाद् आचार्य शंकर कृत

सौन्दर्य लहरी

का अनुवाद

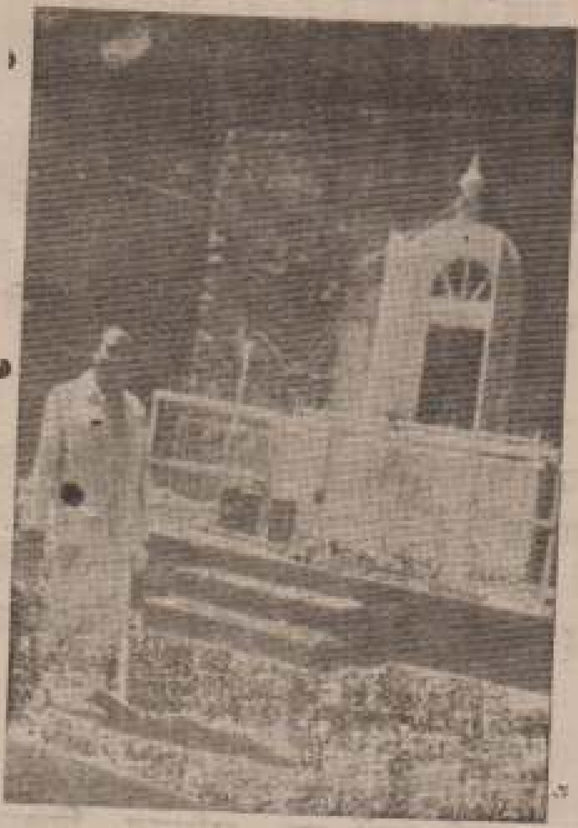

श्री शंकराचार्य शैल

श्रीनगर

सौन्दर्य लहरी

१

शिव से शक्ति का न होता योग शक्तिशाली
तो देवों में क्या श्वास का स्पन्द चलित होता
इसी से हरिहर विरंचि करते हैं आराधना
किसी पुण्य का प्रभाव है जो करते प्रणाम हैं

२

तुम्हारे चरण रज प्रवाह से सभी जीव प्रकट होते हैं
ब्रह्मा भी प्रयास विन सृजन कर लेते हैं
शेषजो सहस्त्र फन पर उन्हें धारण हैं करते
शिव उन्हें भस्म बना अंग पर लगाते हैं

३

अविद्या तिमिर में तुम मिहिर द्वीप नगरी हो
जड़ता भगाने में चैतन्य फूलों की मकरन्द झरी हो
दीनों की चिन्तामणिमाला बन गई तुम ही
वराह के दाँत बन भवनिधि से पार करती हो

४

तुम्हारे सिवा सभी देव दोनों हाथों से वर देते हैं
माँ तूने न कभी हाथों का अभिनय दिखाया है
भय से सदा त्राणकर, बांछा से अधिक फल देकर
लोकों को शरण देने में तेरे चरण ही निपुण हैं

५

पूर्व में हरि ने तेरी पूजा कर, नारी रूप पाया
पुरारी में काम का क्षोभ भर पाया था
कामदेव भी श्री चरणों में नत हो रति नेत्रों के द्वारा
बड़े-बड़े मुनियों में मोह भर देते हैं

६

पुष्पों का धनुष, भ्रमरों की डोरी, पंचवाण
लिए सेनापति वसंत मलयमारुत के रथ पर चढ़ा है
हे हिमगिरि कन्ये, तेरी कृपा से अनंगराज
बिना शरीर के (अकेला) जग जीत लेता है

७

कटि मेखला के घुंघरू, गज मस्तक सम स्तन
मध्य भाग में पतली, शरद शशि मुखवती
हाथों में धनुष, वाण, पाश, अंकुश
पुररिपु की देवी का ध्यान प्रकटे हृदय में

८

अमृत के समुद्र मध्य, कल्प वृक्षों के वन में
परिवृत मणिद्वीप में नीप वृक्षों के उपवन मध्य
चिन्तामणिगृह में परमशिव की गोद बैठी
हे चिदानन्द लहरी, भाग्यवान् ही भजते हैं कोई

९

मूल में धरती, जल स्वाधिष्ठान में, अग्नि मणिपुर में
हृदय में वायु, आकाश को विशुद्धि, मन भ्रूमध्य में
इस तरह सर्व कुलपथ का भेदन कर चलती
सहस्त्रदलपद्म में पतिसंग विहरती हो माँ

१०

कुल कुण्ड की कुहरणी, चरणों की सुधा धारा से
सींचती प्रपंच रसाम्नायों से चल पड़ती हो
निज भूमि से उतर, साढ़े तीन फेरे रख, नागिनि सी
कुण्डल लगा, कुलकुण्ड में शयन करती हो

११

चार शिव कण्ठ और पाँच शिव युवतियों के
अपनी नौ मूल प्रकृतियों में निवास है
बने तेतालीस त्रिकोण, शंभु बिन्दु स्थान से मिल
अष्ट दल, षोडशदल, त्रिरेखा से युक्त है

१२

ब्रह्मा आदि कविगण भी, तुहिनगिरि कन्ये
तुम्हारे सौन्दर्य की कल्पना कर लेते हैं
उत्सुकतावश देव ललनायें भी सोच में पड़ जाती
तपस्या से भी दुष्प्राप्य शिव सायुज्य पाती हैं

१३

आयु में वृद्ध, नेत्रों को कुरुप लगते हैं, जड़ क्रीड़ा में
उन्हें भी देखकर आकर्षक बना देती हो
भागती हैं युवतियाँ ऐसे उनके पीछे
फटी चोलियाँ, खुली वेणियाँ, उतरता दुकुल है

१४

पृथ्वी में छप्पन, बावन हैं जल में, अग्नि में बासठ
चौवन है वायु में, नभ में बहत्तर और मन में है चौंसठ
सभी मयुखा हैं ज्योति प्रसरण वाली
सबों के ऊपर में चरण कमल हैं तुम्हारे

१५

शरद शशि सम श्वेत वर्ण वाली, जटा जूट के मुकुट हैं
त्रास त्राण कारक दो हाथ में अभय वर हैं
शेष दो हाथों में पुस्तक, स्फटिक माला है
जो न करे नमन, दाक्षा-मधुक्षीर सा काव्य क्या लिखेगा ?

१६

कवियों के चित् कमल को पुष्पित करने वाली
जो सन्त भजते तुम्हारे अरुणिम रूप को
ब्रह्मा की प्रिया, तरुणतर शृंगार लहरी से निर्गत
कविता निकलती है, सज्जनों की रंजिनी

१७

सावित्री और वाग्देवियों सहित, शशि मणि शिलाओं
से निर्मित मूर्तियों का हे माँ, जो ध्यान करते हैं
श्रेष्ठतम रचना करते हैं वे काव्यों की जिनमें
वाग्देवियों का आमोद-रस रहता है

१८

तरुण सूर्य की कान्ति रखने वाली तुम्हारी
अरुणिमा को भू से गगन तक जो ध्यान करते हैं
उनके वश में हरिण नयना सब, उर्वशी भी
चकित स्तम्भित खड़ी हो जाती हैं

१९

मुख एक विन्दु, दोनों कुच दो विन्दु बने
नीचे उसके ध्यान करे आधे हकार का
क्षोभ कर देवें तुरन्त नारियों के चित्त का
सूर्य चन्द्र के स्तनवाली डालती हो भ्रांति में

२०

तुम्हारे अंगों से बहते अमृत का जो ध्यान करते हैं
चन्द्रशिला मूर्त्तिवत् शमन करे विष का वह
गरुड़वत्, वे ही अपनी सुधा दृष्टि से
ज्वर पीड़ित मनुष्यों को सुखी कर देते हैं

२१

हे भवानी, डालो करुणा दृष्टि इस दास पर
ऐसी स्तुति करता जो कहे "भवानी त्वं" माँ
तत्काल ही देती निज सायुज्य पदवी उसे
जिसे आरती करते विष्णु, ब्रह्मा इन्द्र निज मुकुट से

२२

शंभु अर्द्धांग हरण कर भी हो तुम अतृप्त मन में
अब तो यही शंका दूसरे अंग के हरण की
पूर्ण शरीर ही भासता अरुण रंग, तीन नयन युक्त
कुच भार से झुका, मुकुट द्वितीया चन्द्र से सुशोभित है

२३

ब्रह्मा से सृष्टि, पालन श्री विष्णु से, रुद्र संहर्त्ता हैं
अपने तन को स्थिर रख सब कुछ तुम ही करती
'सदा' कहकर शिव सबों को निगल जाते हैं
तुम्हारी चंचल भ्रू लताओं की आज्ञा का सहारा ले

२४

त्रिदेवों की पूजा हो जाती तुम्हारे चरण सेवने से
अतः ये देव करबद्ध खड़े रह जाते
निज मुकुटों को मणिमय सिंहासन संग रख
उचित भी है उन्हें शोभा वृद्धि के लिए

२५

महा संहार में ब्रह्मा भी मर जाते हैं, विष्णु विरत होते
यम का विनाश, मृत्यु में कुबेर पड़ जाते हैं
सहस्त्र नेत्र लिए महेन्द्र जो तन्द्रा रहित हैं, बन्द
करते सब नयन, तुम्हारे पति मात्र विहार करते हैं

२६

बोलना ही जप होता, मुद्रायें सब कर्मकाण्ड
चलना प्रदक्षिणा, भोजन ही आहुति, शयन प्रणाम है
सभी सुखों का भाग आत्मार्पण हो-यह सब विलास
मेरा, सदा तुम्हारा पूजन-क्रम रहे

२७

अमृत का पान कर ब्रह्मा, इन्द्रादि भी मर ही जाते
वंसे ये जरा मरण हरणकारी कहलाते हैं
कालकलना का प्रभाव मिट जाते गरल सेवो पर
हे माँ, शिव रक्षित रहते ताटङ्क युगल से

२८

अपने भवन में आते देख शिव को, परिचारिकायें
'जय हो' कहती हुई सावधान करती हैं
बाँचिये ब्रह्मा-विष्ण के मुकुट से कहीं
चरणों को टक्कर न लगे मुकुटों से

२९

हे सेवायोग्ये, नित्ये, जो भक्त तुम्हारे शरीर
रश्मियों, अणिमादि से घिरा रहकर यह कहेगा
'मैं ही तुम हूँ" उस साधक की यदि उतारें आरती
संवर्ताग्नि भी, तो कोई आश्चर्य नहीं

३०

चौंसठ तन्त्रों से सम्पूर्ण भुवन को सिद्धियों से पृथक कर
शिव ने परिपूर्ण किया, फिर भी संकेत से
तुम्हारे, सवपुरुषार्थ एवं सिद्धियों के तन्त्र दाता
तन्त्रों में स्वतंत्र भूतल पर उतार डाला।

३१

शिव शक्ति काम क्षिति सर्य चन्द्र
फिर काम हंस और इन्द्र, परा के
संग काम, विष्णु त्रिहृल्लेखामय
बीज मंत्र ले साधक करते हैं जप आपका

३२

हे नित्ये, काम, योनि, लक्ष्मी, रख आदि में
महाभोग रसिक भक्तजन चिन्तामणियों की अक्षमाला पर
शिवाग्नि आत्माग्नि में गोघृत की शतशत धाराओं से
आहुति देकर कर रहे यजन अवधि रहित हो

३३

तुम शरीर हो शभु का, वक्ष पर सूर्य चन्द्र स्तन ही हैं
सकल विश्व के शिव ही हैं तुम्हारी आत्मा
तुम दोनों में पराशक्ति आनन्दमय का है समरस
शेष-शेषी सम्बन्ध यह परमानन्ददायी हैं

३४

तुम ही मन, तुम ही नभ हो, हे शिव युवती
जल भूमिमय सब परिणति तुमसे अलग नहीं
चिदानन्द को हे माँ परिणत करने को
धर रखा है विराट् का व्यक्त रूप

३५

वन्दन करता तुम्हारे आज्ञा-चक्र के सहस्त्र सूर्य-चन्द्र का
वाम पार्श्व में परा चिति संग, शिव हैं स्वयं विराजित
उनके आराधक रहते सब ज्योतिर्मय लोक में
सूर्य चन्द्र अग्नि-विषय से बाहर, निरातंक हो

३६

नभ के जनक स्फटिकमय शिव और शिवमय सभ
व्यवसिता देवी की लगा रहता हूँ सेवा में
जगत मुक्त रहता है सदा अंधकार से
जिनकी शशि किरणों की अंग-कांति से

३७

भजता हूँ हृदय में सवित कमल निर्गत हंस जोड़े को
जो सदा विहरते हैं महापुरुषों के मानस में
परिणति है अठारह विद्यायें जिनकी वाणी को
जो दोष जल निकाल पूर्ण दुग्ध रख देते हैं

३८

तुम्हारे स्वाधिष्ठान में जो संवर्त्ताग्नि है भरा
उसी में काल सम्पन्ना समया का भजन करता हूँ
जब भस्म करता है वह क्रोध से इस विश्व को
तब समया की दयार्द्र-दृष्टि करती शीतल उपचार है

३९

तुम्हारे मणिपुर शरणागत श्याम मेघ के जल का सेवक हूँ
जड़ी जहाँ है विद्युल्लताऐं सतरंगिनी
वर्षाया करती हैं सर्वत्र शीतलता वहाँ, जहाँ
सूर्य और अग्नि से त्रिलोकी तपता रहता

४०

मानस पूजा करता हूँ नव रस मय ताण्डवरत शिव का
समया देवी को संग ले जो हैं मूलाधार में
जनक जननी के समान सदा दया पूर्ण मान
जगत सदा सनाथ बना रहता है

४१

क्यों न प्रतीत होगा इन्द्र धनुष जैसा उन्हें
हे गिरिजे, जो तुम्हारे हेम मुकुट का कीर्त्तन करता है
जुड़ा है जो किरीट गगन ताराश्रों के मणियों से
चन्द्रकला निर्मित पक्षी नीड़ सा जो लगता है

४२

हे शिवे, कोमल घने चिकने केश नील कमलवत्
दूर करें तम को मेरे, पुष्प गूँथे हैं जिनमें
इन्द्रवाटिकाश्रों के, जैसे स्वयं आये हों
तुम्हारे केशों की सुगन्धि को बढ़ाने को

४३

तुम्हारे मुख की सौन्दर्य लहरी के प्रवाह के
स्रोत में तुम्हारी केशराशि में सिन्दूर भरित माँग
वृद्धि करें कल्याण का मेरे भाग्य-पथ में
श्ररुण किरण सम, वह माँग, शत्रु वन्दी सूर्य सम हैं

४४

पद्मों की शोभा की हँसी उड़ाता तुम्हारा मुखमंडल
जिनपर अलकें लहराती तरुण भ्रमरों की कांति सी
घुँघराले केश मध्य, दांतों के मुस्कुराने से
कामारि के नयन भ्रमरवत् मुग्ध हो जाते हैं

४५

ललाट लावण्यविमल, मुकुट सुशोभित बाल चन्द्र सरिस
चमकता है सदा, लगता है ललाट श्रो, मुकुट की
कलाएँ परस्पर उलट पूर्ण चन्द्र रूप धारण कर
सुधा लेप से लिप्त अमृत बरसता हो

४६

भुवन भय की विनाशिका, हे उमे, भ्रुवों की त्योरी
कामदेव के वाम हस्त के उस धनुष के समान है
प्रत्यंचा से निर्मित भ्रमर सम नयनों से, मध्य
जिसका फैला है मुट्ठी औ' कलाई तक

४७

दायाँ नेत्र तुम्हारा सूर्य रूप से दिवस को बनाता है
वायें नेत्र से रात्रि को बनाता है चन्द्रमा
तीसरा नयन है स्वर्ण विकसित कमलों सा पूरित
दिवस और रात्रि मध्य में विलसती है संध्या

४८

विशाला कल्याणी फुल्ल सरसिज सम अयोध्या है
कृपा समधारा किंचित मधुरा भोगवतिका हैं
सर्वरक्षिका अवन्तिका बहुनगर विस्तारमयी विजया हैं
विभिन्न नगरों के नाम वाले संदेह दूर करें तुम्हारी दृष्टि

४९

कवि काव्यमय स्तवन मकरन्द में कटाक्ष विक्षेप
बंकिम दृष्टि, मधुप सम व्यग्र नेत्र द्वय
नव रसास्वादन हेतु ये भाव देख, तुम्हारा
तृतीय नेत्र ईर्ष्या से बन रहा अरुण रंग

५०

हे जननी शिवे, शिव के लिए तुम रखती हो श्रृंगारार्द्र दृष्टि
इतर जनों के लिए उपेक्षामयी, क्रोधमयी गंगा हेतु
विस्मयवती शिव लीला प्रति, भयमयी सर्पों से
जीतकर कमलों की शोभा सखियों से स्नेह और करुणा रख

५१

गिरिपति कुल कलिके कर्ण तक फैले हैं नेत्रवाण सम
फल लगे हैं जिनमें पुर भेदी शिव को क्षुब्ध करने को
पंख स्थान पर जैसे पलक रहे, ऐसे कान तक फैले नेत्र
सदा कार्य करते हैं मन्मथ के वाण सम

५२

तीन रंग के अञ्जन लगाने से नेत्र लगते हैं त्रिरंग के
प्रलय काल में उपरत हुए त्रिदेवों को पुनः
उत्पन्न करने को त्रिगुण जैसे धर रखा है
यही है तुम्हारे नयन अञ्जन की लोलायें

५३

पशुपति पराधीनता में रत हृदयवाली, नेत्रों
में दयायुक्त अरुण, श्वेत और श्याम जो रंग हैं
पावन करने को शोण गंगा यमुना सम
सदा शुद्ध करती हो तीर्थों के सलिल सम

५४

तुम्हारे निमेष उन्मेष से जग का प्रलय और उदय है
जगत जो खिला है तुम्हारे पलक खोलने से
अब यही शंका है कि जगत की रक्षा हेतु
तुमने निमेष अपना रोक रखा है

५५

निमेष हीन मछलियाँ जल में डरकर छिपती हैं
कहीं तुम्हारे नयन कानों से चुगली न कर बैठें
कुमुदिनी दल प्रातः में कपाट सम बन्द होते
रात्रि में जैसे उन्हें खोल सुख देते हों

५६

आपकी दूरगामिनि दृष्टि नीलकमलवत् शोभती है
उन्हीं कृपामयी दृष्टि में मुझे भी नहा दो माँ
धन्य हो जय शरद-चन्द्र की शीतल किरणें
वन में, महल में, समान रूप से चली आती हैं

५७

हे राजन्य तनये, पालो युगल का कौतूहल
धनुष वाण सम किसको न विस्मित करता है
लगता है दोनों भौहों के धनुष पर कानों तक
कोई वाण उत्तुंग सा चढ़ा हो

५८

दो कर्ण फलों से सम्पन्न तुम्हारा मुख लगता है
चार पहिये का रथ हो कामदेव का, जिसपर
महावीर कामदेव सूर्य चन्द्र के दो पहियों पर
खड़ा तैयार हो, शिव से युद्ध करने को

५९

हे शर्वाणि ! अमृत लहरो के कौशल हरण करती है
शारदा, श्रेष्ठ युक्तियों को श्रवण, चुल्लुओं से पीती है
पीते काल तुम्हारे चमत्कार से कुंडल जो हिलते हैं
[illegible] का उत्तर जैसे हूँ से देते हों

६०

[illegible] पताके हे हिमांशकी ! तुम्हारो नासिका की वांछा
[illegible] उचित फल देवे मुझे शीतल निश्वास ये
[illegible] रहे हैं, वाम नासा गह्वर में ऐसी समृद्धि है
[illegible] एक मुक्तमणि भूषण जैसे बाहर प्रकट हो

६१

दांत हैं सुन्दर, मूंगालता फलसा, अधर है लाल सा
बिम्बा नहीं कह सकते हैं क्यों तुम्हारे बिम्ब के
प्रतिबिम्ब से फीकी है बिम्बा, यदि ओठों से
समता करें तब भी वे रहे लज्जित हो सदा

६२

तुम्हारे चन्द्र मुख मुस्कान की किरणों से रस पीकर
मिठास से चकोरों के चंचु जड़ बन गये
अमृत रस के पियासे चन्द्रामृत को खट्टी जान पीती हैं
प्रत्येक रात्रि में जैसे वह कांजी ही हो

६३

जपा पुष्प सम तुम्हारी उस जिह्वा की जय हो
जो अकथ रूप से गुण गाती हैं स्वामी के
जिह्वाग्र की स्फटिकमयी वाणी जैसे बदल कांति को
बनी हो स्वयं माणिक्य जैसी तुरंत

६४

शिव जब दैत्यों को मार शिरस्त्राण कवच उतारते हैं
बच जाता निर्माल्य के विपरीत चण्डांश है
उपेन्द्र, स्कन्द, इन्द्र सब चबाये तेरे पान का
ग्रास करते हैं जो धवल कपूर युक्त हैं

६५

शिव के विभिन्न अपदानों की वीणा पर
शारदा की श्लाघा हेतु शीश जो हिलाती हो
फिर वीणा कलरव को फीका करने वाले स्वर से
शारदा को वीणा रखने को विवश करती हो

६६

हे गिरिजे, अनुपम चिबुक का क्या वर्णन हो
अँगुलियों से हिमालय ने स्पर्श जो किया था
शिवजी को लगता चिबुक वह दर्पण सा
अधर पान से आकुल जिसे बारंबार उठाया है

६७

गति गमक गीतक निपुणे, तीन हैं रेखायें गले में
सौभाग्य सूत्र को तीन लड़ियाँ विवाहोत्सव की
लगता है सामगान के तीन ग्राम उस पर
गान करते समय हो गये हों चिह्नित

६८

ब्रह्मा का पंचम शिर जो नख से उड़ाया शिव ने तब से
शेष चार की रक्षा हेतु तुम्हारे अभय हाथ की शरण ली थी
शरण में अर्पण बुद्धि अपने चतुर्मुख से
करते हैं स्तुति तुम्हारे चार हाथों की

६९

तुम्हारी नखों की अरुणिमा हँसती है नवारुण कमल पर
यदि उसकी समानता खोजूँ तो क्रीड़ा रत रमा के
चरण तल की लाक्षा सी मिल पायें
हे माँ, उन अरुणिम नखों को प्रणाम है

७०

गणेश, स्कन्द द्वारा पान किये जाने वाले
तुम्हारे स्तन मेरे खेद का हरण कर ले
टपकते मुँह से सूड़ ले अपने मस्तक को टटोलते
कहीं यही नहीं माँ के कुच कुम्भ होवें

७१

नगपति पताके माँ ! सुधा पूर्ण माणिक्य
निर्मित कलशसम स्तनों को देखकर
मन में कदा भी संदेह नहीं होता है, कार्त्तिक
गणेश अभी तक वधू संगम रस से अनभिज्ञ हैं

७२

गजासुर के शीश रूपी कुंभ से निर्गत मुक्ता से
निर्मित हार, कुच भाग पर शोभ रहा है
बिम्ब जैसे अधरों की प्रभा छाया पड़ती उन पर
लगता है शिव की प्रतापमयी कीर्त्ति हो

७३

धरणिधर कन्ये, तुम्हारे दुग्ध का पारावार
तुम्हारे उर के सारस्वत ज्ञान के समान है
द्रविड़ शिशु ने किया पान जिसका कि, वह
प्रौढ़ कवियों सम रचयिता बन पाया था

७४

शिव क्रोध ज्वाला से लिपटी देह ले अनंग ने
गोता लगाया तुम्हारी गंभीर सरोवरवत् नाभि में
उसके धुएं से लता जैसी जो बन गई रेखा
उसे ही माँ सब नाभि से निकली रोमावलि मानते हैं

७५

रोमावलियाँ जो कालिन्दी क्षीण तरंगवत् सी हैं
बुध जनों को लगता है नाभि की नागिनी सा
जो दो कुचों के संघर्षण के आकाशवत् हो
प्रवेशशील हों जैसे नाभि कमल में

७६

गिरिजे, जय हो उस नाभि की जो गंगा भवरसी हैं
स्तन पुष्पधारिणि लता रोमावलियों का उद्‌गम हों
कामाग्नि की यज्ञ वेदो कहूँ रति लीलागार या
शिव नेत्र सिद्धिदायक, जैसे बिल द्वार हों

७७

बनी रहे मध्य भाग की कृश समावस्था वह
स्तन तट भार क्लान्त झुकी मूर्त्ति के
नदी तट वृक्ष सदृश टूटता, लगता नाभिवलियों पर
धन्य है, उस क्षीणता, कृशता को बन्दन है

७८

काँखों की रगड़ से चलते पसीने से, तट स्थान पर फटी चोली
टूट सकते उसके बन्द दो स्तनों के हिलने से
लवली वल्ली ने कटि देश मन्मथ ने तीन बाँधे हैं
मात्र बचाने को टूटने से बन्द को

७९

हे पार्वति ! पिता ने जो निज नितम्बों को काटकर
दहेज रूप में अपना गुरुत्व और विस्तार दिया
इसी से तुम्हारे गुरुत्व और विस्तार से
पृथ्वी की गति रुकी, विस्तार भी तुम्हारा है

८०

गिरि सुते ! विजय कर अपने उरुओं से
गजराज की सूँड़ औ 'कदली स्तम्भों पर गोल
झुकने लगी पति के प्रणाम को, तो जानुओं
से जीत लिया गजशिर कुम्भों को

८१

तुम्हारी जंघाएं रुद्र को हराने हेतु द्विगुण वाणों से
भरे कामदेव के दो तरकसों जैसी लगती हैं
दश अंगुलियों के नखों के अग्रभाग दीख पड़े हैं
लगता है अग्र फल बने देव मुकुटों की शाण पर

८२

हे माँ, जो चरण रखें हैं श्रुतियों की मूर्धा पर शिखर सम
कृपा कर उन्हें मेरे सिर पर भी रख दो
वे चरण जल गंगा हैं शिव जटा जाल की
तलवों को लाक्षा प्रभा, विष्णु केशों की मणि प्रभा जैसी है

८३

हम नमन करते नयनाभिराम दोनों चरणों का
लाक्षा की उत्कृष्ट कान्ति दमकती हैं जिन पर
जिनके अभिहनन की स्पृहा के कारण शिव
रखते असूया है प्रमदवन अशोक से

८४

गोत्र का अपमान होने से शिव ललाट पर जो चरण रखा
तो नूपुर झंकारमय किलकिलाहट से मन्मथ हँसा था
शिव ने जो भस्म किया उसका प्रतिकार देख
पूर्णकर सका वह निज अभिलाष सब

८५

हे माँ, तुम्हारे चरणों से कमल पराजित हैं
सो क्या विस्मय, नष्ट होता कमल हिम से
तुम्हारे चरण हिम पर चलने के अभ्यस्त हैं
दिन में लक्ष्मी पात्र कमल पर तेरे चरण सदा यथावत् हैं

८६

हे चण्डिके, तुम्हारे चरण नख हँसते हैं कल्प वृक्षों पर
वे नख देवांगनाओं के कर कमल वन्द करने हेतु
लगते हैं दश चन्द्रवत, कल्पवृक्ष
फल देते हैं कराग्रों से स्वर्गवासी देवों को
तुम्हारे चरण तो हर समय दरिद्रों को
ईच्छित कल्याण और धन प्रदान करते हैं

८७

तुम्हारे चरणों का मन्दार पुष्प स्तवक सम जो कमल हैं
धन प्रदान करता दीनों को इच्छानुसार
आत्मा मधुकर के मेरे छो चरण सौन्दर्य मकरन्द
विकास हेतु, निमग्न मन्दार वन पाये
पञ्च ज्ञानेन्द्रिय, एक अन्तःकरण बने षट्पद

८८

सुन्दर चरित्रवाली पद विन्यास क्रीड़ा तुम्हारी
जानने को विचरते राजहंस तेरे भवन में है
तुम्हारे नूपुरों की झंकार उन्हें देती है शिक्षा
कि कैसे वे हंसगति को अपना पायें

८९

ईश्वर हरि ब्रह्मा रुद्र रक्षित तेरे मंच के चार पाये हैं
स्वच्छ चादर है मंचपर कपट मायामय वे शिव ही है
तुम्हारी कांति से वह ऐसा अरुण है लगता
कि कौतुक दिखाने को शृंगार रस ही आया हो

९०

शंभु की जयन्ती वाली करुणा-अरुणा सी लगती है
उन अरुणा के केश स्वाभाविक घुंघराले हैं
मुख पर मन्द हास है, गात्र हैं शिरीष आभायुक्त
कुचतट पाषाण सा, क्षीण कटि, गुरु नितम्ब हैं

९१

सूर्य बना दर्पण है तुम्हारे चरण तर रहने से
तुम्हारे मुख के भय से भीतर छिपाया है किरणों को
स्वच्छ रहने से तुम्हारे मुख का प्रतिविम्ब भी
खिला हृदय कमल सा, चन्द्र से भय रहित

९२

चन्द्र बिम्ब मरकतमणि के गोल डिब्बे जैसा लगता है
धब्बा कस्तूरी और कलायें हैं कपूर सी
जलयोग से पीस डाला उस डब्बे में, जितना भी खर्च
हो रोज, ब्रह्मा बारंबार भरते जाते हैं

९३

पूजा अन्तःपुर की हो, साम्राज्ञी, अतः तुम्हारी पूजा की
मिलती नहीं मर्यादा चपल चित्त वालों को
इन्द्र के नेतृत्व में खड़े सब देवता, द्वार पर
खड़ी अष्ट सिद्धियों तक ही पहुंच पाते हैं

९४

थोड़ा भजन कर विधि पत्नी का, कौन है
जो लक्ष्मीपति नहीं बनता
हे सती ! श्रेष्ठ हो सतियों में, तुम्हारे
कुचों का संसर्ग शिव के शिवा कुरवकने भी नहीं पाया

९५

परब्रह्म महिषी ! आगमज्ञात ब्रह्म पत्नी वाग्देवी
हरि पत्नी पद्मा, हर पत्नी पार्वती कहलाती हैं
असीम महिमामयी महामाया हो कोई, जिसने
भ्रमित कर रखा है पूरे विश्व जाल को

९६

लाक्षारस महावर से लाल हो रहा चरण धोवन
कब मुझे मिलेगा वह पान करने को
शारदा मुख कमल पान सरिस वह रस है
समर्थ सब देने को कवित्व शक्ति

९७

शारदा और लक्ष्मी से पूर्ण होने से तेरा भक्त
ईर्ष्या का पात्र बनता ब्रह्मा और विष्णु के
रति पति धर्म में शिथिलता डाल देता है
पशुपाश मुक्त भक्त परमानन्द पा जीता है

९८

नित्ये, प्रसन्ने, निरवधिगुणे, नीतिनिपुणे
चित्त में निवास करो, पूर्ण ज्ञानी साधकों में
निर्मुक्त से, नियति से, षट् शास्त्र करें स्तुति तेरी
स्थान दो मेरी स्तुति को भी अपने शास्त्र में

९९

तुम्हारी दी हुई वाक्शक्ति से स्तुति के ये शब्द
दीपक से सूर्य की आरती उतारने जैसा
चन्द्रकान्तमणि द्रव से चन्द्र को अर्घ्य जैसा
अथवा सागर के जल से जैसे सागर का सत्कार है

......मोहि व्रज बिसरत नाहीं

बृन्दावन सों बन नहीं, नन्द गाँव सों गाम।
बंशीवट सों वट नहीं, कृष्ण नाम सों नाम ।।

याद है, वृन्दावन के मयूर वे नाचते थे
श्री गोपाल के कोमल पदों पर
स्मरण पर दौड़ पड़े थे मधुमती के
स्वयं भगवान् थे खीर लिए करों पर
विट्ठल निरंजन औ' मोहनजी साथ थे
गले माल, हाथ की मिठाइयाँ दिये अधरों पर
बरसाने गाँव वाली कहती थी, 'हा ! कृष्ण'
रोमांचित भक्त सब देख राधा पलकों पर

याद है, मधुवन का मदनगोपाल मन्दिर
रोज मोर प्रातः पुकार कर जगाया था
मोहनजी काला और मधुमती संग
राधा कृष्ण लीला में सखा बन पाया था
लीला अलौकिक उस काली-दह मन्दिर में
पुजारी ने भवानी से जूठा माँग खाया था
धन्य मधुवन की झाँकियाँ निराली वे
बाल कृष्ण लाल कृष्ण भाव दिखलाया था

याद है व्रज के पक्षी वे मुनिगण

एक टक निहारते थे भोले से श्याम को
नयन की सफलता लताओं की कौन कहे
लिपट कर बाँधे हैं भोले से श्याम को
काँटोवाली टहनियाँ छीनती पीताम्बर हैं
झुला रहे नीप वृक्ष भोले से श्याम को
बरसाने गाँववाली नाक में बुलाक धरे
हाथ धरा दिखलाया था भोले से श्याम को

याद है, बाँके विहारी की गलियाँ वे

लीला परिकरों ने दिखाया जो रूप था
सर्वरूप, अपरूप, झाँकी श्री राधा की
कृष्ण अङ्कपर्यंका— दिखाया जो रूप था
हास और विलास संग नाचते थे गलियों में
नूपुर की रुन-झुन में, दिखाया जो रूप था
जय श्री राधा, जय घनश्याम-दोनों स्वयं गाते थे
हँसे साथ दोनों, दिखाया जो रूप था

याद है, गोकुल की ग्वारन ने उस दिन
स्वयं बनाकर प्रसाद जो खिलाया था
और मदन मोहन की गली दिखलाकर
मधुमती की वास का स्थान दिखलाया था
मोहनजी, काला स्वयं चकित थे देख
भवानी का स्नेह, ज्ञान शिव का जो पाया था
महिमा गुरुदेव की कौन कहे मधुवन में
बरसानेवाली ने जो भाव सिखलाया था

याद है, रामदास काठिया की कुटिया में उस दिन
बाबा के वियोग में आँसू जो बहाया था
कृष्ण के आँसुओं को मेघ का जल समझ
यात्रियों ने पत्र पुष्प फल जो चढ़ाया था
दो बटुक पुरुष सूक्त पाठ में मग्न थे
सिद्ध दास बाबा का चित्र लहराया था
रहस्य-लीला वृन्दावन की कौन कहे भाई
राधा बिहारी ने निज करों से खिलाया था

याद है, रंगनाथ मन्दिर के द्वार पर
मत्त हो मतवाली मीरा नाचती थी
काली गाय घूम कर, कर रही प्रदिक्षिणा
और विरक्त संतों की टोली नाचती थी
नाच रहे यात्रीगण, भवन जैसे नाचते हों
रोम रोम में मानों लीला नाचती थी
नाचते मयूर सब वृक्ष, लता, टहनियाँ
रंग, रसरंग की सहेली नाचती थी

याद है, पगला बाबा के मन्दिर में खड़े
हजार देवता जैसे पुकारते हों
इन्द्र यम नृऋत वरुण सभी लोक पाल सब
जैसे मधुमती के चरण निहारते हों
तीन मंजिल भवन में ऐसे सुहावने दृश्य
स्वर्ग अलका औ' अमरावती विहारमय हो
दुर्गा भवानी कृष्ण काली को कौन कहे
जैसे व्रज कमल दिव्य शोभा को निखारते हों

याद है, उमंग लिये मानस-तरंग में
मुरली मनोहर ने व्रज में बुलाया था
राम मन्दिर में आरती सजाकर सन्तों की
अगवानी की थी, मधुर पद गाया था
धनुष बाण जिस मन्दिर में तुलसी ने धराया था
वहीं गोरी कन्या का विवाह भी रचाया था
राधा की माँग भरते सिन्दूर देख
बाँके विहारी का परिणय देख पाया था

याद है, खनकती चूड़ियाँ ग्वालिनों की
कृष्ण को नारी औ' मनिहारी बनाया था
कमरबन्द बाजूबन्द नूपुर सजाये सब
वेद की ऋचाओं ने प्यारे को रिझाया था
श्रुतिचरी मुनिचरी और सहचरियों ने
ललित त्रिभंगी का ललित रूप पाया था
ललिता विशाखा औ' मधुमती संग में
अष्टदल कमल में जैसे नचाया था

याद है, सघन वन वृक्षलता ग्रोटों के
पार यमुनाकूल पर मोहन निहारते थे
कामधेनु कोटि-कोटि चरती थी धूप में
नन्द की थीं गौएँ—मोहन निहारते थे
शुक, मोर, चातक, मैना ग्रौर गोरैया सब
चकित ग्रौर विस्मित, मोहन निहारते थे
बरसाने गाँववाली दूध लिये खड़ी थी
रहस्य कौन खोले—मोहन निहारते थे

याद है, परस्पर श्री ग्रङ्गों के संग से
मधुर रसभाव को प्रत्यक्ष दिखलाया था
यही श्रृंगार है सदा सर्वोत्तम रस
मुरली की ध्वनि में कलो बीज पाया था
विश्व ब्रह्माण्ड हेतु, माया के दर्शन हेतु
मिट्टी भी खायी ग्रौर तथ्य को दुराया था
इन्द्र के कोप ने ग्राठ-वर्ष बालक से
महागोवर्धन ग्रंगुलियों पर धराया था

याद है, वे श्यामले त्रिभङ्ग ललित लाल
मंच पर खड़े गोरी बाला को निहारते थे
आठों सिद्धि नवों निधि थी विलासमय वहाँ
स्नेह आह्‌लाद आनन्द को सँवारते थे
गोप गोपी गौएँ आनन्द सागर विभोर
घृत दूध दही का फूल बरसाते थे
कौन कहे कैसा था कौतुक, वह दूध
संग पूतना के प्राण पी जाते थे

याद है, प्रिया और प्रियतम का एकीभाव
सखा भाव मैत्री भाव प्रेम भाव सब कुछ
रासेश्वर श्याम चञ्चल चपल चटोर चोर
जानकर गोपी उन्हें मानती है सब कुछ
नौ वर्ष के बालक ने ब्रह्मविद्या दे दी
वही था रास-हास वही था सब कुछ
स्वयं सर्वात्म भाव में सर्वदा समर्पित है
श्याम छवि माधुरी—मेरे लिए सब कुछ

याद है, छब्बीस वन और तीस उपवन
महावन गोकुल सहस्त्र दल-पत्र हैं
श्री गोविन्द पीठ यह, कर्णिका में स्वर्णपीठ
दक्षिण में महापीठ निगमागम तत्र है
अग्निकोण वाले दल में निकुञ्ज कुटी
वीर कुटी उसमें शान्ति सर्वत्र है
ईशान दिसि में ही सिद्ध पीठ, पति
भाव कामना की सिद्धि यत्र-तत्र है
द्वादश आदित्य हैं उत्तर दिशा में
और वायु कोण में काली दह सत्र है

याद है, कदम्ब वन, नन्द औ' नन्दीश्वर वन
नन्दनानन्द और पलाशवन सुन्दर हैं
केतकी, अशोक और सुगन्धि मादन वन
अमृतवन, भोजन औ कैलाशवन सुन्दर हैं
सुख साधन, वत्सहरण, शेषशायी, श्यामपुर
दधिग्राम, चक्रभानु, शंकितवन सुन्दर हैं
विपत्, बालक्रीड़ा, धूसर के मद्र भवन
खायरा, वीर, उत्सुक, नन्दनवन सुन्दर हैं

याद है, अष्टदल कमल की प्रदक्षिणा
यमुना जी करती नित्य, शिव गोपीश्वर हैं
लक्ष्मी परिपूर्ण षोड्शदल व्रज से बाहर हैं
यथाक्रम वृन्दावन परिक्रमा के परिकर हैं
षोड्शदल महत्पद महद्धाम रूप हैं
उसके प्रथम दल में मधुवन भास्वर हैं
मधवन में चतुर्भुज महाविष्णु बैठे हैं
कारणों के कारण और तुरीयाधीश्वर हैं

याद है, दल षोड्श का द्वितीय दल
खदिर वन लीला का पुण्य स्थल है
नित्यानन्द रस का आश्रय गोवर्धन है
कुसुम सरोवर, महालीला प्रेम बल है
नित्य वृन्दावन के स्वामी श्री कृष्ण हैं
यहीं पर सुरभी ने 'गोविन्द' पद दिया था
क्यों रहस्य खोलना लीला जो सकल है

याद है, कनुधा की भाभी संग राधा गृह
उत्सव में कुलवधू रूप में कन्हैया का जाना
किसी से न बोलना, घूँघटा न खोलना
माँग में सिन्दूर भरा केशर बिन्दी का लगाना
राधा के ईशारे पर श्यामा ने उतारे घूँघट
नव विवाहिता वधू सा लजाना, घूँघट चढ़ाना
सखियों ने बलपूर्वक घूँघट को खींचा कि
दाँतों से दबाकर प्यारा घूँघट बचाना
भाभी के कहने "नन्द नन्दन कब मिलिहैं"
गीत के राग में सब सखी को सुनाना
करुणा रस सागर उमड़ा कर सखियों में
राधाजी के नेत्रों का सावन बरसाना
बरसाने वाली का सावन बरसाना
—याद है

प्रभु निरंजन के मुण्डन सुअवसर पर
कात्यायनी-मन्दिर की शोभा निराली थी
देवी के पैर धरे श्याम कह रहे, "साथ
नहीं खेले राधा"—शोभा निराली थी
देवी ने तोष दिया - मैं ही श्री राधा हूँ
कल साथ खेलें —क्या शोभा निराली थी
व्रज की अधिष्ठात्री देवी कात्यायनी
वर दे रही - शोभा निराली थी

याद है, राधा कुण्ड का मन्दिर वह
जहाँ श्री राधा श्री कृष्ण को रिझाती थी
वीणा बजाकर, प्रेम से गाकर मानो
जैसे श्याम को लोरी सुनाती थी
रूठते समय वह कदलीवन भवन में
जाकर करवट उलट रह जाती थी
चरण दबा उन्हें श्याम बार-बार स्नेह करें
मान के समय वह जैसे अलसाती थी

याद है, बरसाने गाँव की लीला वह
'चलो बरसाने' कह कृष्ण वहाँ आये थे
संग ग्वाल बाल थे, प्रभु भी निहाल थे
राधा के हृदय की पुकार पर आये थे
कैसा मिलन था विरह और मिलन का
कौन कहे योग और वियोग संग पाये थे
मधुमती संग हम उस दिन बरसाने में
अद्भुत सौन्दर्य दोनों का देख पाये थे

याद है, राधा-कृष्ण युगल किशोर का
प्रेम सुधासागर में निमग्न विश्वमोहन रूप
महाभाग्यशाली गोपियाँ तो प्राण हैं
परम आदर्श गुरु का वह विश्वमोहन रूप
कोटि कोटि मदनसम अकथ अनन्त रूप
सच्चिदानन्द सौंदर्य सुधानिधि विश्वमोहन रूप
अनन्त रस, अनन्त शक्ति, अनन्त माधुर्यमय
गोपी नयन चातक के मेघ विश्वमोहन रूप

याद है, निरुपम निरुपाधि चिन्मयी राधा
पार है सदा सर्वशास्त्र नायिकाओं के
प्रतिक्षण अलौकिक नव नवायमान रूप
वाले श्याम नायक हैं शाश्वत नायिकाओं के
विचित्र निःशेष निस्सीम मधुर गुणगण सब
भक्ति योगियों की अनुभूति नायिकाओं के
नील चीर धारिणी औ पीत वसनधारी की
अङ्गकान्ति आभरण नायक-नायिकाओं के

याद है, राधा कृष्ण सर्वथा अमित रस पूर्ण
मधुरतम सुख-संविधान संलग्न हैं
प्रेममयी तृष्णा का नाम जो 'राग' है
दास्य, सख्य, वात्सल्य, मधुर, संलग्न हैं
वे ही स्वामी, सखा औ' बन्धु हैं सबके
कोई एक भाव कोई मिश्र में ही मग्न हैं
गोपियों का आत्म मिलन निर्मल निर्दोष है
विधिमार्ग विसर राजमार्ग धर्ममग्न हैं

याद है, कहते थे प्राणजी, "गोपियों ने मेरे लिए
गृह की उन कठिन बेड़ियों को तोड़ डाला है
ऋण चुका सकता नहीं कभी भी तुम्हारा
देवताओं की आयु में भी, ऐसा प्रेम पाया है
एक ही उपाय है मुझे मुक्त करने का
तुम्हारे सौम्यशील ने सदा सरसाया है
श्री व्रजधाम के नाम रूप कौतुकमय
शिवब्रह्मादि ऋषियों ने देख पाया है